अध्याय 6

जगदीशचन्द्र माथुर के नाटकों में नव्य-नाट्य-शिल्प

भूमिका :

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटककारों में जगदीशचन्द्र माथुरजी का महत्वपूर्ण स्थान है। माथुरजी नाट्य-शिल्प के अच्छे ज्ञाता है। भारतीय और पाश्चात्य नाट्य-तंत्र के अच्छे ज्ञाता है। इतना ही नहीं, उन्हे ग्रामीण और नागरी दोनों प्रकार के जीवन का यथावत् अनुभव है। उन्होने संख्या में कम नाटक लिखने पर भी उन नाटकों में नव्य-नाट्य-शिल्प के विविध प्रयोग करके समसामायिक हिन्दी नाटयसृष्टि में चार चाँद लगाय है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से माथुरजी के नव्य-नाट्य-शिल्प को निम्नलिखित शीर्षकों में बाँटा जा सकता है -

1) "सूत्रधार और नटी" के नव्य-प्रयोग
2) "सूत्रधार और नटी" के अन्य नव्य-प्रयोग
3) "आधुनिक अन्योक्ति" का मंचीय रूप "पहला राजा"
4) "प्रतीक पात्र और खण्डित व्यक्तित्व अंकन
5) भाषा और संवाद के अभिनव प्रयोग
6) गीतों, लोकगीतों के नव्य-प्रयोग
7) रंगमच के नये आयाम

प्रस्तुत अध्याय में परम्परागत नाटय-तत्वों के आधार पर माथुरजी के प्रत्येक नाटक का विवेचन करना हमारा उद्दिदष्ट नहीं है, अतः यहाँ सिर्फ "नव्य-नाट्य-शिल्प" की परिधि में ही अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

"सूत्रधार और नटी" के नव्य-प्रयोग –

"कोणार्क" मे जगदीशचन्द्र माथुर ने सूत्रधार और नटी का प्रयोग मुख्यतया "उपक्रम" "उपकथन" और "उपसंहार" के अंतर्गत किया है जो नाटककार के आधुनिक दृष्टिकोण का परिचायक है। "कोणार्क" के परिशिष्ट । में निर्देशक और अभिनेताओं के लिए दिये गये संकेतो में नाटककार ने स्वयं लिखा है कि उपक्रम, उपकथन और उपसंहार मेरे नये प्रयोग हैं, जिनमें आप संस्कृत नाटकों की प्रस्तावना और पाश्चात्य नाटकों के "प्रोलौग" और "एपिलौग" एवं कोरस की झलक पायेंगे।[1] नाटक के प्रथम अंक के प्रारंभ में "उपक्रम" का प्रयोग किया गया है। जिसमें खण्डहर कोणार्क मंदिर की झांकि प्रस्तुत की गयी है। उस मंदिर का आंतर्बाहय वर्णन संक्षेप में रनिंग कॉमेंट्री के रूप में किया गया है।

"कोणार्क" नाटक तीन अंको में विभाजित हैं। नाटक क दूसरे अंक और तीसरे अंक के प्रारभ में "उपकथन" का प्रयोग किया गया है। दूसरे अंक और तीसरे अंक के प्रारंभ में "उपकथन" का प्रयोग किया गया है। दूसरे अंक के प्रारंभ के "उपकथन" में कोणार्क मंदिर के शिखर की पूर्ति का आनंद और कलिंग नरेश नरसिंहदव का मंदिर की प्रतिष्ठापना के लिए आगमन संकेतित है। तृतिय अंक के प्रारंभ के "उपकथन" में कलिंग नरेश के महामात्य चालुक्य राजराज का षडयंत्र द्वारा अचानक आक्रमण कलिंग नरेश का सुरक्षित प्रयाण और कोणार्क मंदिर के खण्डहर होने का संकेत दर्शाया गया है। नाटक के अंत में तृतीय अंक के बाद "उपसंहार" का प्रयाग करके नाटककार ने खण्डहर कोणार्क का परिचय दिया है। नाटककार ने "उपक्रम" "उपकथन" और "उपसंहार" में सूत्रधार तथा वाचिकाओं के माध्यम से कोणार्क के कथ्य का सूचित किया है। सूत्रधार और दो वाचिकाओं के समुदाय को नाटककार ने "वृंदवार्तिक" संज्ञा दी है। इस अभिनव प्रयोग के बारे में माथुरजी के विचार उल्लेखनीय है – "इस तरह से उपक्रम उपसंहार और उपकथन ये तीनों नाटक के एक विशेष अंग बनाये गये है और सूत्रधार और दो वाचिकाऐं एक ऐसे समुदाय के रूप में हमारे सामने आते है जो नाटक के स्थूल रूप तथा आत्मा दोनों पर तीव्र प्रकाश डालते हैं। इस समुदाय को मैन संज्ञा दी है "वृन्दवार्तिक" की।[2]

माथुरजी का "पहला राजा" नाटक भी तीन अकों में विभाजित किया हैं। इस नाटक में भी नाटककार ने "सूत्रधार" और "नटी" का अभिनव प्रयोग किया है। "पहला राजा" नाटक में प्रत्येक अंक के प्रारंभ मे सूत्रधार और नटी का प्रयोग किया गया है। नाटक के प्रथम अंक मे सूत्रधार दर्शकों को संबोधित करते हुए नादान वैज्ञानिकों, नादान कवियों, नादान दार्शनिकों तथा मेधा, कल्पना और मनन के मानस पुत्रों को पुकार सब मिलकर परमात्मा की वंदना करने के लिए आवाहन करता है। ये आवाहन आधुनिक है। तत्पश्चात् सूत्रधार और नटी के संवादों के द्वारा ब्रह्मावर्त तथा सरस्वती और दृषद्वती नदियों के प्रदेशों में अत्याचार, क्राति, हत्या आदि का संकेत दिया है। दूसरे अक में सूत्रधार और नटी के वार्तालाप द्वारा देवताओं की निर्मिती और उनकी स्वरूप की झांकि सूचित की गयी है और

देवता मानव की मदद नहीं कर सकते यह संकेत दिया गया है और पृथु को कस्तूरी मृग की उपमा देकर प्रश्न उपस्थित किया है कि क्या वह मानव-मदद की अपनी शक्ति से परिचित है। तीसरे अंक के प्रारंभ में सरस्वती नदी के आस-पास के रेगिस्तान का हरियाली मे नव-परिवर्तन सूचित किया गया है।

"पहला राजा" नाटक के प्रत्येक अंक के मध्य में भी नाटककारने आवश्यकतानुसार सूत्रधार और नटी की अवतारणा नाटक में प्रतिबिम्बित विभिन्न समस्याओं के उद्घाटन में की है। उदाहरणार्थ नाटक के तीसरे अंक के मध्य में सूत्रधार और नटी के वार्तालाप द्वारा स्वातंत्र्योत्तर भारत की कृषि-सिंचाई योजना की ओर संकेत किया गया है। नाटककार ने दृषद्वती की धारा को मोडनेवाला बाँध पृथु के प्रयत्न से तैयार हो जाने का संकेत व्यक्त किया है। नटी और सूत्रधार का निम्न वार्तालाप देखिए -

नटी : पृथु को चैन नहीं है, फिर भी उसका मन शिथिल नहीं है, उसका शरीर थका नहीं है।

सूत्रधार : इसलिए कि हर समस्या उसके लिए चुनौती है और हर चुनौती का सामना करते समय पृथु का तन-मन यज्ञ की वेदी बन जाता है। इस बरसात से पहले अगर दृषद्वती की धारा को मोड़नेवाला बाँध तैयार हो जाय तो पृथु सौवां यज्ञ पूरा हो जाएगा।

नटी : पूरा होगा ....[3]

"पहला राजा" नाटक के बारे में सूत्र-धार और नटी की अवतारणा को डॉ. दशरथ ओझा ने "नाटक में यह सर्वथा नया प्रयोग है।"[4] एसा कहा है। माथुरजी के अनुसार "पहला राजा" के "सूत्रधार और नटी" में यूनानी कोरस, भागिनी अंकिया नाट के सूत्रधार और संगी तथा पुराण महाभारत के वैशम्पायन, सूत और शौनक सभी का थोडा बहुत पुट है।[5]

"<u>सूत्रधार और नटी" के अन्य नव्य - प्रयोग :</u>

"दशरथनंदन" और "रघुकुल रीति" "श्रीरामचरितमानस" के विविशष्ट प्रसंगों को लेकर लिखे गये नाटक है। ये नाटक वास्तव में माथुरजी के मौलिक नाटक नहीं है बल्कि "श्रीरामचरितमानस" के कुछ प्रसंगों के नाटयात्मक शैली म नाटयरूपान्तर या नाटयान्तर है जैसा कि पहले कहा जा चुका है। इन नाटकों में जगदीशचन्द्र माथुरजी की नाटयशिल्पगत नीवनता यही है कि उन्होंने तुलसीदासजी के "श्रीरामचरितमानस" जैसे महाकाव्य में नाटकीय संभावनाओं की जो गुजाईश है उसको उन्होने "दशरथनदन" और रघुकुल रीति" इन दो नाटकों मे साकार किया है।

उपर्युक्त दो नाटकों की भाँति माथुरजी न "दशरथनंदन" नाटक में सूत्रधार और नटी का प्रयोग कथावाचक के रूप में किया है। लकिन इस नाटक में तुलसीदास को ही सूत्रधार के रूप मे

प्रस्तुत किया है यह माथुरजी का और एक नया प्रयोग है। नाटक के प्रारंभ से अंत तक प्रासंगिक रूप में सूत्रधार तुलसीदास ही रहे है। नाटक के प्रारंभ मे प्रथम अंक में गणेश, भगवान श्रीकृष्ण नारायण शंकरजी तथा गुरुमहाराज की जो वंदना वृंदगान के रूप में की गयी है उसके सूत्रधार तुलसीदासजी ही है। नाटककार माथुरजीने रंग-संकेत मे यह निर्दिशित किया है कि प्रत्यक सोरठे को पहले गुसाईंजी स्पष्ट शब्दों म गाते हैं और भक्तमंडली उसी तरह उसे दोहराती है।[6] नाटककार जगदीशचन्द्र माथुरने केवल गुरु गद्यात्मक अंश को ही सूत्रधार के रूप में तुलसीदास को प्रस्तुत नहीं किया है बल्कि श्रीरामचरितमानस के कुछ चुने हुए अंशो का गद्यात्मक रूप देकर उसके निवेदक (सूत्रधार) तुलसीदासजी ही दिखाये है। भगवान श्रीरामचन्द्रजी की लीलाओं को प्रस्तुत करने का संकेत तुलसीदास (सूत्रधार) के निम्नांकित शब्दों में देखा जा सकता है ---

"हे श्रोताओं, हे दर्शको । उन परम कृपालु, शरणागत प्रेमी भगवान ने रघुपति के रूप में भक्तों के हित अनेक लीलाएँ की। महामुनियों, कवियों और विद्वानों ने मुझसे पहले उन लीलाओं का विशद वर्णन किया है। ... ऐसे ही मै दासानुदास तुलसीदास पुरातन महाकवियों द्वारा वर्णित भगवान् की सुहावनी लीलाओं की अनगिनत तरंगो को अपनी अटपटी देशी भाषा की छोटी-सी अंजलि में सहज ही समेट पा रहा हूँ।"[7] यहाँ डॉ. नरनारायण राम का मत उधृत करना उचित होगा- "सूत्रधार का साथ देने के लिए यहाँ (दशरथनन्दन) गायक मंण्डली भी है। आकाशवाणी के नैरेटर के अंदाज में तुलसीदास सूत्रधार बने हुए है। और उनका मुख्य कार्य है तेजी से बदलते दृश्यों के बीच कथासूत्र पिराए रखना।"[8] कभी-कभी प्रासंगिक रूप में नाटककारने दशरथनन्दन नाटक में सूत्रधार और नटी के प्रयोग के साथ साथ (1) वृंदवाचक 1, वृंदवाचक 2, वृंदवाचक 3 और वृंदवाचक 4, (2) युवती 1, युवती 2, युवती 3 और युवती 4, (3) बालक 1, बालक 2, बालक 3, और बालक 4, (4) सखी 1, सखी 2, सखी 3, और सखी 4, (5) वृंद 1, वृंद 2, वृंद 3, और वृंद 4, (6) राजा 1, राजा 2, राजा 3 और राजा 4, (7) स्त्री 1, स्त्री 2, स्त्री 3, और स्त्री 4, (8) पुरुष 1, पुरुष 2, पुरुष 3 और पुरुष 4 के विविध प्रयोग किये है जो नाटय शिल्प की नवीनता के द्योतक है। इतना ही नहीं, तुलसीदास के समन्वय वाद के भी परिचायक है।

"दशरथनन्दन" नाटक की अगली कड़ी "रघुकुल रीति" नाटक है। जहाँ "दशरथनन्दन" नाटक में सूत्रधार के रूप में "तुलसीदास" प्रस्तुत हुए है वहाँ "रघुकुल रीति" नाटक में माथुरजी ने स्वतंत्र रूप में सूत्रधार और नटी का प्रयोग किया है, जिसमें तुलसीदास सूत्रधार नहीं है। जहाँ "दशरथनन्दन" नाटक में वृंदवाचक 1, वृंदवाचक 2, वृंदवाचक 3 और वृंदवाचक 4 आदि का प्रयोग किया गया है वहाँ "रघुकुल रीति" नाटक में सूत्रधार और नटी के साथ-साथ वाचक 1, वाचक 2, वाचक 3 का प्रयोग किया गया है। अपवादभूत एक जगह पर सखी 1, सखी 2, सखी 3[9] का प्रयोग किया गया

है। ये प्रयोग मूलतः "सूच्च" के ही उदाहरण हैं।

संक्षेप में हम यह कह सकते है कि सूत्रधार और नटी के प्रयोग में माथुरजी ने परम्परा को केवल आधार के रूप में ग्रहण कर नवीनता के विविध आयामों को ही उजागर किया है।

"आधुनिक अन्योक्ति" - का मंचीय रूप "पहला राजा" :

काव्यशास्त्रीय भाषा में अन्योक्ति एक अलंकार है अन्योक्ति में अप्रस्तुत के वर्णनद्वारा प्रस्तुत का बोध होता है। जगदीशचन्द्र माथुरजीने "पहला राज" नाटक में मुख्यतया पृथु के माध्यम से वास्तव में स्वतंत्र भारत के प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू को ही अप्रत्यक्ष रूप में चित्रित किया है। माथुरजी ने अपना "पहला नाटक" स्वर्गीय पंडित जवाहरलाल नेहरू की याद में अर्पित किया है[10] साथ ही यह नाटक "मॉडर्न एलिगोरी"— आधुनिक अन्योक्ति—का मंचीय रूप है।[11]

"पहला राजा" नाटक के आधार पर पृथु और पण्डित जवाहरलाल नेहरू में कुछ साम्य दिखाई पडता है जिसका ब्योरा इस प्रकार दिया जा सकता है

"पहला राजा" पृष्टांक	"पहला राजा में चित्रित पृथु	पण्डित जवाहरलाल नेहरू
45	1) ब्रहमावर्त का पहला राजा	1) स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री
43	2) तेजस्वी आनन, गौर शरीर, बलिष्ठ भुजाएँ, देवराज इंद्र का स्वरुप	2) गौर वर्ण तथा तेजस्वी प्रसन्न व्यक्तिमत्व
45	3) स्वप्रशंसा का विरोधी	3) स्वप्रशंसा त्याज्य
46	4) कर्मव्रती	4) "आराम हराम है" के हिमायती
44	5) धर्मरक्षक	5) धर्मनिरपक्षता में विश्वास
58	6) कविमन	6) कविमन
64	7) निहत्ता, और निडर, झुजलाहट और प्यार	7) निःशस्त्र शान्तिदूर और निर्भिक झुझलाहट और प्यार
52 53	8) अर्चना (पत्नी) प्रति अनुराग	8) कमलाजी(पत्नी) के प्रति अटूट प्रेम
61,62	9) अकाल में दस्युओंतथा अनार्यों की सक्रिय सहायता में योगदान	9) पंचवर्षिय याजनाओं द्वारा मुख्यतया ग्रामीण तथा दलित जनता की सहायता
48	10)प्रथम मंत्रिमंडल शुक्राचार्य—पुरोहित मंत्री गर्ग— ज्योतिष मंत्री अत्रि — अमात्य	10)स्वतंत्र भारत का प्रथम मत्रिमंडल और उसके मंत्री. सरदार पटेल—गृहमत्री आदि
63	11)मत्रीमडल म दरार	11)मंत्रिमंडल म दरार पडी थी
59	12)चक्रवर्ती बनने की आकाक्षा नही	12) साम्राज्यवाद के विरोधी जनतत्र मे विश्वास, पंचशील का स्वीकार।

उपर्युक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि पृथु और पण्डित नेहरू बहुत कुछ साम्य है। माथुरजीने पण्डित नेहरूजी का व्यक्तित्व, उनकी चारित्रिक विशेषताएं तथा उनके समय में उद्‌भुत सामाजिक धार्मिक, राजनीतिक आर्थिक समस्याओं को दूर करने का उनका भरसक प्रयास आदि को ध्यान मे रखकर ही "पहला राज" नाटक में पृथु क चरित्र की सृष्टि की है। पूरे नाटक में पण्डित जवाहरलाल के नामतक का उल्लेख न करते हुए पृथु पात्र के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप में पण्डित नेहरूजी की ही सृष्टि की है।

साथ ही "पहला राजा" नाटक मे कवष, गर्ग, अत्रि, शुक्राचार्य, सुनीथा, अर्चना उर्वी आदि पौराणिक पात्रों के माध्यम से स्वातंत्र्योत्तर भारत की विविध समस्याओ को उद्‌घाटित किया गया है। इस सिलसिले में माथुरजी के विचार उल्लेखनीय है — मै कोई नई बात नहीं कर रहा हूँ। बर्नाड शॉ (जोन ऑफ आर्क) क्रिस्टाफर फ्राइ (द फर्स्ट वॉर्न), डी एच लॉरेन्स (डेविड) जॉ एनुल्हि (टोजन बार), ब्रेस्ट (गलिलियो) इत्यादी अनेक आधुनिक नाटककारों ने प्राचीन पात्रों, प्रसगो और परिस्थितियों के माध्यम से रंगमंच पर समसामायिक समस्याओं को विश्लेषण किया है। एक अत्याधुनिक इटैलियन फिल्म डाइरेक्टर- पासोलिनी- ने हाल ही में ईसा की जीवनी और वातावरण के जरिये वर्तमान जीवन की असगतियां पर प्रकाश डाला है। "पहला राजा" भी ऐसा ही एक प्रयाग है।"[12]

उपर्युक्त विवचन से यह स्पष्ट है कि "पहला राजा" मॉडर्न ऐलिगोरी" अर्थात् "आधुनिक अन्योक्ति का मंचीय रूप है।

<u>प्रतीक पात्र और खण्डित व्यक्तित्व अंकन :</u>

प्रतीक विशुध्द में अंग्रेजी शब्द "सिम्बल" ( ) का पर्यायवाची है और इसके शाब्दिक अर्थ है— चिह्न, संकेत प्रतिरुप, प्रतिनिधि, प्रतिमा, मूर्ति, निशान आदि।[13] प्रतीक अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। विस्तार से बचने के लिए प्रतीकों को प्रयोग किया जाता है। अलंकारे की भाँति साहित्य का उत्कर्ष और सौन्दर्य प्रदान करणे की क्षमता प्रतीकों में होती है। डॉ रमेश गौतम के अनुसार प्रतीक सूक्ष्म का प्रत्यक्षिकरण करते हुए उसे मनोनुकूल आवरण प्रदान कर अभिव्यक्ति को अधिक सशक्त और प्रभावपूर्ण बना देते है।"[14]

<u>प्रतीक पात्र :</u>

जगदीशचन्द्र माथुरजीने अपने नाटकों मे पात्र सृष्टि मे प्रतीको के नय प्रयोग किये है जा उनकी नाटय-प्रतिभा क परिचायक है

"कोणार्क" का महाशिल्पी विशु पुरातन पीढी का प्रतीक है जब कि युवा शिल्पी धर्मपद नयी पीढी का प्रतीक है। एक में "परम्परा" का पुट है ता दुसरे म "आधुनिकता"का । नाटक के तीसरे अंक मे महाशिल्पी विशु का परिवर्तित प्रतिशोध लेनेवाला रूप कलाकार में सोय हुए "पौरुष" का

का प्रतीक है।

"पहला राजा" के अधिकतर पात्र किसी न किसी रूप में प्रतीक पात्र है। गाथा-पृथु पहला राजा का प्रतीक है, कवष पुरुषार्थ का प्रतीक है। डॉ. रमेश गौतम के अनुसार "कवष उपेक्षित जनता के क्रुध्द वर्ग का कर्मशील प्रतिनिधि है।"[15] अत्रि, गर्ग एवं शुक्राचार्य आधुनिक कुटिल राजनीति के प्रतीक है। अर्चना अनुपम नारी-सौन्दर्य तथा काम सम्मोहन की प्रतीक है। उर्वी धरती की प्रतीक है। सुनीथा आधुनिक राजनीति मे फँसी हुई आधुनिक नारी का प्रतीक हैं। सूत और मागध आधुनिक "भाट" या स्तुति-पाठक क प्रतीक है। ऐतिहासिक या पौराणिक पात्रों की प्रतीकात्मकता आधुनिक मानव-जीवन-सन्दर्भ में ही की गई है। अतः माथुरजी द्वारा अभिव्यक्त पात्र-प्रतीकों मे आधुनिकता के सहज ही दर्शन होते है। प्रतीकों के सन्दर्भ में स्वयं माथुरजी के विचार भी मननीय है। "वैदिक और पौराणिक साहित्य पुरातत्त्व एवं इतिहास, लोकगीत और बोलचाल -- इन सभी मे मुझे प्रतीको के उपकरण मिले है उन समस्याओं को प्रकट करने के लिए जिनसे मैं इस नाटक में जूझता रहा हूँ। वे समस्याएँ सर्वथा आधुनिक है, व उलझने मेरी " भोगा हुआ यथार्थ है।"[16]

खण्डित व्यक्तित्त्व अंकन :

खण्डित व्यक्तित्त्व "स्प्लिट पर्सनैलिटी" ( ) का पर्यायवाची शब्द प्रयाग है। परिस्थितिजन्य आज का मानव टूटा हुआ मानव दिखायी पडता है। उसक व्यक्तित्त्व के टुकडे-टुकडे हो जाते हैं अर्थात् उसका व्यक्तित्त्व खण्डित या विभाजित हो जाता है। ऐसे व्यक्ति मनोविज्ञान की भाषा में "एबनॉर्मल" ( ) या असाधारण होते है। स्वातंत्र्योत्तर साहित्यकारो की पात्रसृष्टि की एक विशेष प्रवृत्ति यह रही है कि उन्होने अपने साहित्य में मनोविज्ञान के धरातल पर पात्रो क खण्डित या विभाजित व्यक्तित्त्व को चित्रित किया है। जगदीशचन्द्र माथुरजी के "कोणार्क" नाटक में महाशिल्पी विशु के खण्डित व्यक्तित्त्व को चित्रित किया गया है। विशु एक असाधारण शिल्पी है और उसका व्यक्तित्त्व असाधारण अर्थात "एबनॉर्मल" है। अपनी शिल्प कला में पूरी तरह से लीन होनेवाला और कोणार्क जैसे सर्वांग सुन्दर शिल्प का निर्माता विशु असाधारण कलावंत है। लेकिन इस कलावंत का व्यक्तित्त्व भी प्रसंगवश टूटता है। अपनी प्रयसी सारिका गर्भवती हुई है यह ज्ञात होन पर कुल और समाज के भय स पीडित होकर सारिका को छोडकर कला के आँचल में अपना मुँह छिपाता है लेकिन अपनी प्रियसी सारिका के अलगाव स उसका व्यक्तित्त्व खण्डित होता है। अपनी व्यथा सौम्यश्रीदत्त के सामने इन शब्दो मे व्यक्त करता है " जब मुझे ज्ञात हुआ कि वह माँ बननेवाली है तो कुल और कुटुंब क भय ने मुझ ग्रस लिया । नदी पर बढती साँझ की तरह उस भय की तंद्रा मेरी बुध्दि पर छा गयी। और मै भाग आया , सारिका और उसी अज्ञात संतान स दूर-बहुत दूर- भुवनेश्वर मे देव-मंदिर की

छाया में,–– कला के आँचल म अपना मुँह छिपाना।"[17]

माथुरजी के शारदीया नाटक के बायजाबाई और नरसिंहराव –– इन दो पात्रों मे भी खण्डित व्यक्तित्व की झाँकी दिखाई पडती है।

भाषा और संवाद के अभिनव प्रयोग :

जगदीशचन्द्र माथुरजी के नाटको मे पात्रानुकूल भावानुकूल प्रसंगानुकूल भाषा और संवाद शिल्प के अभिनव प्रयोग देखने को मिलते है। जिनका विवेचन इस प्रकार किया जा सकता है

अ) नाटय-भाषा :

डॉ. गोविंद चातक के अनुसार "विषयवस्तु चरित्र, स्थिति, नाटकीय व्यंग्य और रगतल क बीच में माथुर की नाटय भाषा के कई रग उभरते है।[18]

काव्यात्मक संवेदना :

माथुरजी के "कोणार्क" और "शारदीया" नाटकों मे काव्यात्मक संवदनायुक्त भाषा क प्रयाग काफी दिखाई पडते है। शारदीया नाटक में अपनी प्रियसी बायजाबाई (शारदीया) की स्मृति मे नरसिंहराव की भाषा काव्यात्मक संवेदना सहज ही मुखर हो उठी है। नरसिंहराव की भावविभोरता निम्नलिखित शब्दा म दखी जा सकती है –– "तुम्हारे ही रूप का ताना-बाना तो मेरी उंगलियो का गति द रहा था। ... और आज चांदनी आई है तो तुम्हे भी आना है। .... तुम न जाने कहां हो? शायद पूना में। शायद कागल म। .... कागल। यक्षका सदेश बादल ल जा सका। लेकिन चांदनी चलती ही नहीं। .... इस चांदनी के अंचल का दूसरा छोर शायद कागल में है। .... तुम्हें क्या मालूम, मै कहां हूँ? नहीं मालूम कि राष्ट्रद्रोह के अपराध में पाषाणों के इस पिंजरे में... हमेशा के लिए बन्द हूँ।"[19]

मिथकीय भाषा शैली :

माथुरजी ने अपने नाटकों में पुरातण मिथकों का आधुनिक जीवन सन्दर्भ में प्रयोग किया है। "पहला राजा" नाटक में प्राचीन मिथकीय भाषाशैली का प्रयोग आधुनिक बोध में ही हुआ है। नाटक के प्रारम्भ मे सूत्रधार और नटी के वार्तालाप तथा पृथु को पहला राजा घोषित करनेपर सूत-मागध का वार्तालाप मिथकीय भाषा शैली के उत्कृष्ट उदाहरण हे जिनमें आधुनिक युगबोध ही मुखरित होता है ––

सूत-मागध : (एक साथ) हे राजन् हे नरेश्वर हे भूपति हम आपकी स्तुति करते है।

सूत : आप दुष्टा के लिए दण्डपाणि होग आप धर्ममर्यादा के विरोधिया का नाश करेगे। आप अकेले प्रजा का पालक-पोषण और अनुरंजन करेंगे और ...

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

नाशक हे दृढप्रतिज्ञा हे लोकपालक राजन् हम आपका अभिनन्दन करते है।

मागध : जिस प्रकार सूर्य दवता, आठ महीने तपते रहकर जल खिचते है और वर्षा ऋतु मे उसे उंडेर देते है, उसी प्रकार आप प्रजा से कर के रूप में धन संचय कर उसे प्रजा के हित में ही व्यय करेंगे। इसीलिए हे नीतिपालक राजन्, हम आपको नमस्कार करते है।"[20]

आ) संवाद-शिल्प :

जगदीशचन्द्र माथुरजी ने अपने नाटको मे पात्र, स्थिति, कथ्य और रंगतत्त्व की दृष्टि से संवाद शिल्प के नये-नये प्रयोग किये है। कुछ नये प्रयोग दृष्टयव्य है।

पूर्व दीप्ति शैली :

आधुनिक रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में पूर्व दीप्ति शैली का खूब प्रयोग किया है। जगदीशचन्द्र माथुरजी ने भी " कोणार्क" और "शारदीया" नाटकों में संवादो के माध्यम से पूर्वदीप्ति शैली का सुन्दर प्रयोग किया है। "कोणार्क" नाटक के तृतिय अंक में धर्मपद को अपने माता-पिता का परिचय प्राप्त होता है। उस परिचय को नाटककारने संवादो के माध्यम से पूर्व दीप्ति शैली में इस प्रकार व्यक्त किया है —

विशु : धर्मा, मे बच्चे, मेरे बेटे! (रूदन)

धर्मपद : (अपना हाथ खींचते हुए) आप रो रहे हैं, आचार्य!

सौम्य : धर्मपद, तुम सारिका के पुत्र हो?

धर्मपद : आपको मेरी माँ का नाम कैसे मालुम हुआ!

सौम्य : धर्म, आचार्य विशु ही तुम्हारे पिता है।

धर्मपद : क्या?.... आचार्य, मेरे पिता।... मेरे पिता!!..पर.. (जैसे कुछ याद आया हो) मेरे पिता का नाम तो ....!

विशु : तुम्हारे पिता का नाम था श्रीधर ?

धर्मपद : हाँ, हाँ, यही नाम मेरी माँ ने बताया था।

(विशु कुछ हटकर चौकी पर बैठ जाता है)

विशु : वह अभागा श्रीधर मै ही हूँ। ... विशु मेला छदम नाम है।"[21]

लोक-भाषा में वार्तालाप :

जगदीशचन्द्र माथुरजी ने लोकभाषा युक्त वार्तालाप का अभिनव प्रयोग "दशरथनन्दन" और "रघुकूलरिति" नाटक में किया है। यद्यपि इन दो नाटकों में तुलसीदास के "नामचरितमानस"के दोहा सोरठा और चौपाई का प्रयोग वार्तालाप के माध्यमसे किया है, फिर भी कभी-कभी उन्हे तोडकर गद्य रूप मे जनभाषामें सजाकर वार्तालाप का प्रयोग किया है। "दशरथनन्दन" नाटक में विश्वा मित्र के साथ राम-लक्ष्मण का विदेह नगरीमें प्रवेश होता है। उस प्रसंग का वार्तालाप दृष्टयव्य है--

विश्वा	:	राजा जनक की नगरी पसंद आई, राजकुमार?
राम	:	अत्यत रमणीक नगरी है मुनिवर ।
एक बटुक	:	कितनी सुन्दर वाटिकाएं है यहाँ?-- गुजत मजु मत्तरस भृगा। कूजत कल बहुबरन विहंगा ।
दूसरा	:	बरन-बरन विकसे बनजाता। विविध समीर सदा सुखदाता ।।
लक्ष्मण	:	नगर म हाट बाजार भी तो आकर्षक है।
एक मुनि	:	ठीक कहा राजकुमार। जहाँ जाई मन तहँई लोभाई।[22]

रनिंग कॉमेंट्रीके अभिनव प्रयाग :

जगदीशचन्द्र माथुरजीने "कोणार्क" और "पहला राजा" मे सुत्र और नटी के माध्यम से रनिंग कॉमेटी के वार्तालाप पेश किए है लकिन दशरथनन्दन और "रघुकूलरीति" मे रनिग कॉमेट्रि के वार्तालाप इतने सजीव हो उठे है कि हम उस विशिष्ट दृश्य को हाल ही में देख रहे है एसी प्रतीती होती है। "दशरथनन्दन" नाटक मे शिव-धनुष भग प्रसग में और "रघुकुलरीति" मे राम के राज्याभिषेक की तैयारी में जनक नगरी की सामान्य जनता को होनेवाला आनंद और विस्मय देखन लायक है। रघुकुलरीति नाटक का निम्नलिखित वार्तालाप देखीए--

वाचक 2	:	कैसी सुन्दर मगलध्वनि हो रही है।
वाचक 1	:	लेकिन यह क्या? सूर्य निकल आया पर ....
वाचक 2	:	महल के द्वार पर भीड जुडी है सचिवां की सवकांकी, पर .....
वाचक 3	:	जागउ, अजहुँ न अवधपति?
वाचक 1	:	कारनु कवनु विसेषि?
वाचक 2	:	पछिल पहर भूपु नित जागा। आजु हमहि बड़ अचरजु लागा ।।

वाचक । : वह देखो सुमंत्र, जो महल के अंदर गये?"[23]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि माथुरजी के आलोच्य नाटकों की भाषा और वार्तालाप नव्य नाटय शिल्प के उत्कृष्ट उदाहरण है। जो पूरी तरह से नाटकीय हैं और उनमें मंचीयता और अभिनेयता की पूरी गुंजाईश है।

गीतों- लोकगीतों के नव्य प्रयोग्य :

जगदीशचन्द्र माथुरजी ने "शारदीया" और "पहला राजा" नाटक में गीतों, लोकगीतों के नवीन प्रयोग किए है जो वातावरण निर्मिती तथा लोकजीवन और लोकसंस्कृति को उजागर करते है। माथुरजी के "शारदीया" नाटक में खर्दा के युध्द का रोमहर्षक प्रसंग चित्रित किया गया है। युध्द प्रसंग में सैनीकों में उत्साह का वातावरण निर्माण करने के लिए नाटककार ने वीर रस को अभिव्यंजीत किया है। खर्दा की लडाई में विठ्ठल पात्र मारा जाने के कारण सेनापती भाऊ कभी चिन्तित होत है तो कभी आवेशी बन जाते है। उस समय वे इधर-उधर घूमते रहते है और तब वे भूषण के "कवित्त्व" को गुणगुनाने लगते है। भूषण के "कवित्त्व" में शिव का रूद्र रूप चित्रित किया गया है। और वीररस को अभिव्यंजित किया गया है। भूषण के कवित्त्व की कुछ पंक्तियाँ ऐसी है----

"कोप करि चढयो महाराज सिवराज वीर,
धौंसा की धुंकार ते पहार दरकत हैं।
गिरी कुंभ मतवारे सो नित फुहारे छूटे,
कडाकड छिति नाल लाखों करकत हैं।"[24]

भुषण के कवित्व का प्रासंगिक प्रयोग वातावरण निर्मित और नत्यात्मकता की दृष्टि से सार्थक है।

नाटककारने "शारदीया" के दुसरे अंक में सुरदास के "निसि दिन बरसत नैन हमारे।"[25] इस विख्यात पद का प्रयोग बायजाबाई की विरहव्यथा को संकेतीत करने के लिए किया है। बायजाबाई अपना प्रियकर नरसिंहराव के विरह दुःखी होती है। जिस प्रकार कृष्ण के विरह में गोपियाँ तडफती, सिसकती रहती है, उसी प्रकार नरसिंहराव के विरह में बायजाबाई रोती रहती है। यह पद एक मुसलमान युवती (नर्तकी) रहीमन गाती है। सुरदास के पद का सार्थक प्रयोग बायजाबाई के विरह व्यथा को समझाने के लिए किया गया है। इस नाटक के तृतीय अंक के द्वितीय दृश्य में नरसिंहराव कारावास में अपने प्रेयसी बायजाबाई की याद करते करते कबीरदास का "झीनी बीनी घर बीनी चदरिया[26] पद गाता रहता है। कारावास के वातावरण में नरसिंहराव की दुःखपूर्ण मनस्थिति को और एकाकीपन को दिखाने के लिए नाटककारने कबीरदास के पद का सार्थक प्रयोग किया है।

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

"पहला राजा" नाटक में माथुरजीने दो लोकगीतों का अभिनव प्रयोग किया है। स्वयं माथुरजी ने गीतोंपर लोक शैली की छाप स्वीकार की है।"[27] अर्चना वास्तव में पृथु की सहधर्मचारिनी है। विवाह के पहले वह कुछ खोई-खाई सी रहती है। उसकी मनस्थिति को जानकर उर्वी उसे कहती है कि वह विवाह की प्रतिक्षा ही कर रही है और उसे नादान भी कहती है और अर्चना के नादानी का गीत उर्वी स्वयं गाती है। निम्नलिखित काव्य-पंक्तियाँ देखीए--

"सोने की थाली सँजोए बैठी हूँ मै।
पर कोई आता नही
आता नहीं जीमने वाला ..."[28]

प्रस्तुत गीत का प्रयोग अर्चना के खोई-खोई मनस्थिति को प्रकट करने के लिए किया गया है जो औचित्यपूर्ण है। प्रस्तुत गीत में "पर कोई आता नही" जोक धुन का सार्थक प्रयोग तीन बार किया है जो उचित ही है।

नाटककारने नाटक के तीसरे अंक में और एक लोकगीत का प्रयोग किया है। इस अंक में नाटककारने भूमिरुपा गौ को दोहने का प्रसंग प्रस्तुत किया है। इस भूमि-रुपा गौ को दुहनेवालो में पृथु और कवष के साथ-साथ सोना-चाँदीके व्यापारी, विलासी लोग, ज्ञानी लोग, कलाकार आदि का समावेश है। यह सब उल्लास में है। उस समय उर्वी उपर्युक्त लोगों को उल्लास का गीत गाने के लिए प्रोत्साहित करती है। क्योंकि पृथु सूखे और अकाल का चक्रव्युह तोड रहा है। उर्वी के पास खडे सभी स्त्री-पुरुष बडी तन्मयता के साथ समुहगीत गाते है। पूरा गीत लोगों का उत्साह व्यक्त करता है और धरती को नया नाम पृथ्वी का भी उद्घोष करता है। प्रस्तुत गीत में अनदेखी सोनजुही लोकधुन का सार्थक प्रयोग हुआ है। समुहगीत की निम्नलिखित पंक्तियाँ देखीए -

"नीला था आसमान, नीला वितान
नील सरोवर खिली अजान -
अनदेखी सोनजुही।"[29]

"दशरथनन्दन" नाटक में इच्छित वर की प्राप्ति के लिए सीता और उनकी सखियाँ द्वारा भवानी की स्तुति वंदना को प्रस्तुत किया है। जो गेयस्तुति [30]का सार्थक प्रयोग है।

इसमें संदेह नही की माथुरजी ने अलोच्य नाटकों में गातों लोक गीतो और गेय स्तुति के प्रयोग नाटयानुकूल किए है। इन गीत प्रयोगो में नवीनता के दर्शन आप ही आप होते है।

रंगमंच के नये आयाम :

जगदीशचन्द्र माथुरजीने अपने नाटक में रंगमंच के नये आयाम प्रस्तुत किए है। नाटककार का रंगमंच का ज्ञान सूक्ष्म और व्यापक है इसी कारण उन्होने अपने नाटकों में प्रचूर मात्रा में रंग संकेत दिए है। इतनाही नही "कोणार्क" के परिशिष्ट: एक और दो में, "शारदीया" में परिशिष्ट एक में, "पहला राजा" में नाटक के अन्त पृष्ठभूमि के रूप में तथा "दशरथनन्दन" में निवेदन और अन्य प्रस्तावना में अभिनेता, निर्देशक तथा अन्य रंगकर्मियों के लिए आवश्यक सूचनाएँ भी दी है। यह सब रंगसंकेत और प्रासंगीक सूचनाएँ रंगमंचीय आयामों को समजने के लिए सहायक होती हैं। अध्ययन की दृष्टिसे माथुरजी के नाटकों के रंगमंचीय नये आयामों को निम्नलिखित शिर्षकों में बाँटा जा सकता है।

1) दृश्यबंध की नयी कल्पना

2) अभिनय की विशेषताएं

3) प्रकाश योजना के अभिनव प्रयोग

4) ध्वनि एवं संगीत का औचित्य

1) दृश्यबंध की नयी कल्पना :

नाटक और साहित्य की अन्य विधाओं में अंतर स्पष्ट करने वाला नाटक का एक सर्वप्रमुख तत्व रंगमंच है। रंगमंचीय परिकल्पना में दृश्यबंध का महत्वपूर्ण स्थान है। दृश्यबंध के साथ दृश्यसज्जा या मंचसज्जा का शब्द प्रयोग भी किया जाता है। लेकिन इस दोनो में सूक्ष्म अंतर है। डॉ. गोविंद चातक के शब्दों में -- "दृश्यबंध या सेटिंग किसी दृश्य की वह आलंकारिक या सादृश्य मूलक पृष्ठभूमि है जो प्राय: पूरे नाटक में कभी बदलती कभी एक-सी रहती है। व्यापक अर्थ में इसे रंग-संस्कार कह सकते हैं। दृश्यसज्जा इस अर्थ में वह मंचीय विधान है जो नाटकीय क्रिया व्यापार की विकासमान स्थितियों में देश और काल की अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न दृश्यावालियों का उपयोग करता है।"[3] दोनो एक दूसरे के पूरक हैं।

कोणार्क :

"कोणार्क" नाटक तीन अंको में विभाजित है। प्रथम दो अंको का दृश्यबंध कोणार्क मंदिर का निर्माता महाशिल्पी विशु का निवास स्थान है। कोणार्क मंदिर के लगभग पचास गज दक्षिण-पूर्व की ओर एक भोग मंदिर है और इस भोगमंदिर स्थित एक कमरे में महाशिल्पी विशु का निवासस्थान है। नाटककारने दृश्यबंध के रूप में विशु का कमरा तथा कोणार्क मंदिर की बाहय आकर्षक सजावट को

रंगमंचर प्रस्तुत किया है। नाटककार ने नाटक के प्रथम अंक में रंगसंकेत में लिखा है कि "मंदिर की यह झलक जितनी सजावट पूर्ण है उसकी अपेक्षाकृत महाशिल्पी का निवास-स्थान, यह कमरा अत्यंत सादा और अलंकार-विहीन है। इधर-उधर कुछ अधी उत्कीर्ण मूर्तियाँ पडी है। कुछ पाषाण खंड रखे है, जिन पर की गयी खुदाई नजर पड रही है। कुछ छैनियाँ और अन्य औजार भी पडे है। बायी खिडकी के पास एक लंबी चौकी रखी है जिसके सिरहाने की तरफ लकडी की ऊंजी पीट है, जैसी कि अकसर प्राचीन सिंहासनों में हुआ करती थी। चौकी पर एक सादा कालीन बिछा है। चौकी पर भारी चिंतित अवस्था में बैठे हैं महाशिल्पी विशु।"[32] प्रस्तुत दृश्यबंद की विशेषताए यह है कि एक महानशिल्पी अपनी कला में कैसा डुब जाता है और साथ ही साथ कोणार्क के मंदिर के झाँकि से तत्कालीन अर्थात सातवी सदी से तेरहवी शती तक के उड़ीसा में स्थित मंदिरों की सुन्दरता ध्यान में आती है। वास्तव में भारतीय शिल्प कला का एक उच्चांक कोणार्क मंदिर है।

नाटक के तीसरे अंक में दृश्यबंध में काफी परिवर्तन किया गया है। "कोणार्क" के तीसरे अंक के प्रारंभ में रंगसंकेत के अनुसार कोणार्क मंदिर का गर्भगृह से सटा हुआ अंतराल मंचपर दिखाया गया है। नाटककारने अपने नाटक में उसका चित्र पृष्ठ 66 पर समाविष्ट है। इससे दृश्यबंद की कल्पना अधिक स्पष्ट होती है और तत्कालीन सांस्कृतिक और कलात्मक वातावरण की कल्पना आ जाती है। माथुरजी ने "कोणार्क" का दृश्यबंद दो भागो में विभाजित किया है इसका प्रमुख कारण नाटक में चित्रित पात्रों का क्रियाव्यापार और वातावरण निर्मिती है। संक्षेप में "कोणार्क" का दृश्यबंद कोणार्क मंदिर की शिल्पकला उसकी सुंदरता और पवित्रता का द्योतक है। वास्तव में नाटककारने "कोणार्क" के खण्डहर को ही दर्शाया है लेकिन भग्न मंदिर की अपेक्षा उसके गभाकक्ष को ही अच्छी तरह से रंगमंचपर दर्शाया है। भारतीय कला और संस्कृति का ही यह अनूठा नमुना है, इस दृष्टिसे दृश्यबंद की नव्य योजना अप्रतिम है।

शारदीया :

शारदीया नाटक तीन अंको में और सात दृश्यों में विभाजित है। पूरे नाटक की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है। अतः नाटक का दृश्यबंध भी ऐतिहासिक है। विशेषतः मराठा-निजाम कालीन है। नाटक के दृश्यबंद को तीन भागों में विभाजित किया गया है। पहला दृश्यबंद शर्जराव उर्फ सखाराम घाटगे के पूना में स्थित मकान का एक कमरा है। सन 1794 की शरद पूर्णिमा। पूना में शर्जराव घाटगे का मकान। कमरा साफ सुथरा, लेकिन कोई विशेष सज्जित नही हैं। दिवास मे आत, पुराणे ढंग की चौकियाँ और मूर्दे। इस दृश्यबंद का उपयोग नाटककारने पहले अंक का पहला दृश्य दुसरे

अंक का पहला दृश्य और तीसरे अंक का पहला दृश्य दिखाने के लिए किया है। इस दृश्य बंद से यह स्पष्ट होता है कि एक मराठा सरदार प्रमुख का मकान कैसा होता है इसका परिचय मिलता है।

"शारदीया" नाटक का दूसरा दृश्यबंद खर्दा के निकट सिवानदी के किनारे मराठों के शिबिर का तंबू है। "शारदीया" के प्रथम अंक दूसरे और तीसरे दृश्य में यह तंबू दिखाया गया है। यहां नाटककारने तंबू के दृश्य के अन्तर्गत मराटों की युध्द नीति उनका युध्द कौशल आदि को अंकित किया है।

"शारदीय" नाटक का तीसरा दृश्यबंद ग्वालियर के किले का अंधकारपूर्ण तहखाना है। इस तहखाने की एक विशेषता यह है कि इस तहखाने में बायजाबाई का प्रेमी नरसिंहराव को दिखाई देता है। तहखाना अंधकारपूर्ण है और नरसिंहराव का जीवन भी अंधकारपूर्ण है कि वह अपनी प्रेमिका बायजाबाई से शादी नही कर सकता। यह दृश्यबंद एक प्रेमी का दु:खपूर्ण जीवन और एक कलाकारकी उत्कट कलासाधना को उजागर करनेवाला है। अपनी प्रेयसी के लिए पावतोल की महिन साडी बुनाने का महान कार्य नरसिंहराव इस तहखाने में ही करता है अत: बाहरी तौर से अंधकारपूर्ण दिखानेवाला तहखाना कला की साधना में प्रकाशपूर्ण है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि "शारदीया" नाटक का दृश्यबंद भी नयी कल्पना ही है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर बायजाबाई और नरसिंहराव के प्रेम को अभिव्यक्त करने की दृष्टि से शर्जेराव घाटगे के मकान का कमरा और ग्वालियर तहखाना विशेष उपयुक्त है।

पहला राजा :

"पहला राजा" नाटक का दृश्यबंद एक ही है। ब्रहमावर्त मे स्थानेश्वर के निकट एक टिला है और उस टिले को ही नाटककारने दृश्बंद के रूप में प्रस्तुत किया है। नाटककारने नाटक के प्रारंभ में टिले का उपयोग वेन के शव को दिखाने के लिए ही किया है। तत्पश्चात नाटककारने इस दृश्यबंद में वेन के शव का मंथन दिखाया है पृथु को पहला राजा घोषीत करना, पृथु अर्चना प्रणय, भूमि पूजा और "देवी की वंदना", उर्वी और कवष द्वारा नहर खोदना, पृथु रूपा गौ का दुहन आदि प्रसंगो की नियोजना नाटककारने टिले के दृश्यबंद पर की है। टिले पर विविध प्रसंग को अलग अलग दिखाने के लिए प्रकाश और अंधकार का सफल प्रयोग किया है। "पहला राजा" नाटक का दृश्यबंद अधिक प्रभावी और विलक्षण है। ब्रहमावर्त तथा मोहंजोदडो संस्कृति का चित्र इस दृश्यपर हम देख सकते है और प्राचीन भारत की संस्कृति की झलक साकार होती है। इसमें संदेह नही है कि पहला राजा नाटक का दृश्यबंद एक है उसमें एक से अधिक प्रसंग या घटनाएँ प्रकाश या अंधकार के माध्यमसे अलग अलग दिखाए जाते है और दर्शकोंपर दृश्यबंद का एक विलक्षण असर पडता है। अत: यह स्पष्ट है कि प्राचीन

भारतीय तथा लोकजीवन को इस दृश्यबंद पर दर्शाया गया है। निस्सदेह यह दृश्यबंद अभिनव है।

दशरथनन्दन :

जगदीशचन्द्र माथुरजीके "दशरथनन्दन" नाटक का दृश्यबंद अलग है। नाटककारने "दशरथनन्दन" नाटक के प्रारभ में पूरे रंगमंच का स्केच दिया है। जिससे दृश्यबंद की कल्पना सहज ही साकार होती है पूरा रंगमंच बारह भागों में विभाजीत है। प्रत्येक भाग के लिए एक विशिष्ट नाम दिया है जो इसतरह है

विभाग -1	रंगस्थली
विभाग -2	भीतरी मंच
विभाग -3	पार्श्वमंच
विभाग -4	पार्श्वमंच
विभाग -5	सुत्रधार पीठिका
विभाग -6	पार्श्वमंच
विभाग -7	दीर्घा
विभाग -8	नेपथ्य
विभाग -9	प्रवेश
विभाग -10	प्रवेश
विभाग -11	दर्शक

दृश्यबंध पर नाटककारने मुख्यतया मंगलाचर, रामनाम महिमा, पुत्रेष्टियज्ञ, राम-जन्म, विश्वामित्र का राजा दशरथ को रामलक्ष्मण को मांगना, अहल्या उध्दार, राम-लक्ष्मण का जनकपुरी में प्रवेश, पुष्पवाटिका, सिताजी का पार्वतीपुजन, सीता स्वयंवर की घोषणा, धनुष्य भंग, सिताजी का राम को जयमाला पहनाया आदि प्रसंग को दर्शाया है। यद्यपि उपर्युक्त प्रसंग "रामचरितमानस" के पारम्पारिक प्रसंग है फिर भी नाटककारने दृश्यबंद पर न्ये तरिक्कों से दिखाए है। दशरथनन्दन नाटक का दृश्यबंद नया है इस संदर्भ में नाटककारने अपना मन्थव्य दिया है कि "यह केरल, रामलीला, नामलीला, असम के अंकिया नाट और थाईलैंड में रामकियन (रामकीर्ति) नाटक में मंचो को ध्यान में रखकर सुझाया गया है।[33] इस सिलसिले में नाटककारने यह भी बताया है कि इस प्रकार का मंच तैयार करना बडा मुश्किल काम है।

"दशरथनन्दन" नाटक में दिया गया मंच का स्कैच ...ं समाविष्ट किया गया है जिससे दृश्यबंद की कल्पना अधिक स्पष्ट हो सकती है।

रंगमंच का स्कैच

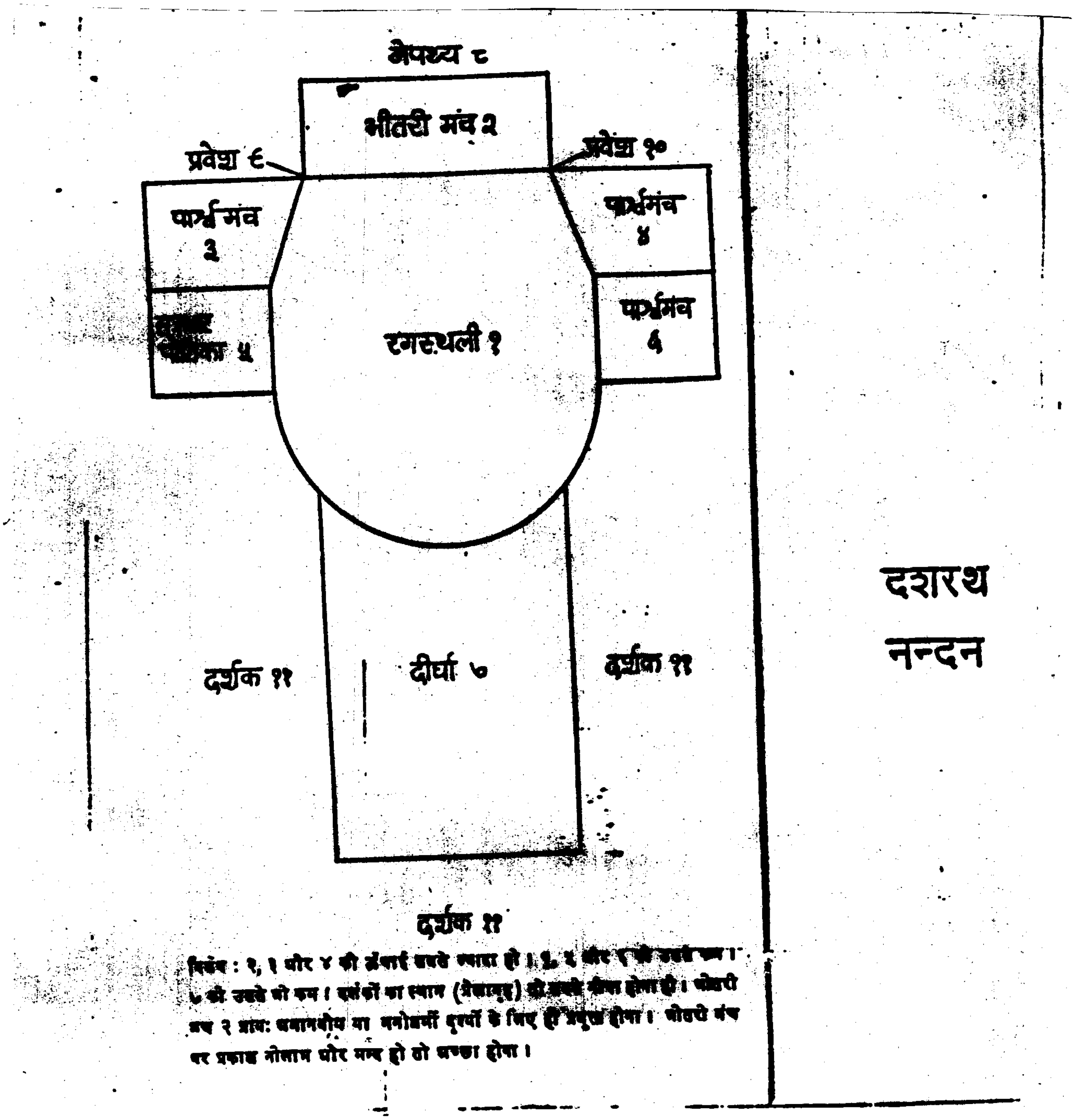

<u>रघुकुलरीति :</u>

माथुरजी का "रघुकूलरीति" नाटक उनके निधनके पश्चात 1985 में प्रकाशीत हुआ है। इसका दृश्यबंद भी "दशरथनन्दन" नाटक जैसा ही है। इस दृश्यबंद पर मुख्यतया रामराज्याभिषेक की तैयारी, ी मन्थरा का कैयी के कान फुंकना, महारानी कैयी द्वारा दशरथ के पास दो वचनोंकी

माँग करना, वचनों की पूर्ति में राजा दशरथ की शोकाकुलता और राम-सीता और लक्ष्मण का वनरागमन की ओर प्रस्थान करना आदि प्रसंगो को दर्शाया गया है।

रघुकूलरीति नाटक का दृश्यबंद और दशरथनन्दन नाटकका दृश्यबंद एक जैसा ही है। यह दृश्यबंद ही अभिनव है।

2) <u>अभिनय की विशेषताएँ</u> :

नाटक रगमंच पर खेलाजाता है जिसमे पात्रोका अभिनय महत्वपूर्ण होता है। पात्रों के विविध हवाभाव उनके विभिन्न क्रिया कलाप और उनकी अनेक मानसीक दशाए वास्तव में अभिनय ही है। भारतीय आचार्योंने अभिनय को चार भागो में बाँटा है— कायिक, वाचिक,मानसिक और आहार्य लकिन अभिनय में इनका अपना काई स्वतंत्र अस्तित्व नही रहता, व एक-दूसरे क पूरक तथा एक-दूसरे मे घुल-मिल जाते है। जगदीशचन्द्र माथुरजी के नाटकोमें अभिनय के कुछ अभिनव प्रयोग दिखाई पडते है।

माथुरजी के "कोणार्क" नाटक में अभिनय के लिए बहुत गुंजाईश है। उपक्रम, उपकथन और उपसंहार मे सुत्रधार और वाचिकाओका अभिनय अनेक दृष्टिकोण स महत्त्व रखता है। विशेषत: कथावस्तुआ सूचित करने के लिए उनका अभिनय "सूच्य" रूप म अपना स्थान रखता है। यहाँ वृध्दवार्तिक के बोलने की शैली उपरोधिकता आदि अभिनय मे दिखाई देते है। प्रस्तुत नाटक मे विशु और धर्मपद दा पात्रों मं दो पिढियो का संघर्ष देखन लायक है। जहाँ विशु पुरातन पीढीका प्रतिनिधि पात्र है वहाँ धर्मपद नये पीढीका प्रतीक है।

विशु : तुम (धर्मपद प्रणाम करता है) सुना है तुम आशु-शिल्पी हो। इतनी छोटी वय में तुम्हें किस गुरूने दीक्षा दी है?

धर्मपद : किसी ने नहीं आचार्य। मै शिल्पी बना, क्योंकि मुझे जीवित रहना था।

विशु : कला तुम्हारा जीवन है, यही न ?

धर्मपद : जीवन भी और जीवन-मापन का साधन भी।

: × × × × × × ,

धर्मपद : क्षमा करे आचार्य, श्रृंगार-मूर्तियों को देखते-देखते मै अघा गया हू।

सौम्य. : अभी से? हॅं हॅं! युवक, किसी रमणी के सामने यह बात न कह देना, नही तो तुम्हे अविवाहित रहना पडेगा ।

विशु : (गंभीर होकर) तो तुम उन लोगों में हो, जो इन प्रणय-मूर्तियों में अश्लीलता देखते जीवन का आदि और उत्कर्ष नहीं?

धर्मपद : जीवन के आदि और उत्कर्ष के बीच एक और सीढी है— जीवन का पुरूषार्थ।

अपराध क्षमा हो आचार्य, आपकी कला उस पुरुषार्थ को भूल गयी है।"[34]

महामात्य राजराज चालुक्य के षडयंत्र और अत्याचार के कारण और अपने बेटे के मारे जाने के कारण विशु प्रतिशोध की भावना से विद्रोही बनता है और कोणार्क मंदिर को तोडने की सोचता है तब उसका क्रोधाग्नियुक्त अभिनय देखनेलायक है। विशु का अट्टहास देखिए —

विशु : (अट्टहास) देवमूर्ति भी गिरेगी और शिखर भी। और फिर ... (पुनः कुदाली का आघात) और फिर मन्दिर की सारी छत और दीवारे नीचे गिर पडेंगी, मेरे उपर, तुम्हारे उपर, इन नीच विश्वासघातियों के ऊपर । (अट्टाहास और आघात) कोणार्क टूटेगा ...... टूटेगा-हा-हा-हा[35]

"शारदीया" नाटक में कुटील शर्जेराव की कुटिलता और दौलतराव सिंधिया की विलासिता, खर्दा के लडाई में मारे गए एक सैनिक विठ्ठल के उपरान्त परशुराम भाऊ की उद्विग्नता बायजाबाई की विरह व्यथा नरसिंहराव की प्रेमातुरता और अन्त में उसकी विरह में भी अटूट प्रेम की शूचिता आदि प्रसंग अभिनय की दृष्टि से अपना विशेष महत्त्व रखती है। जब बायजाबाई नरसिंहराव को कारावास से छुडानेके लिए अंधेरे तहखाने में जाती है तब उन दोनों का प्रेम और विरह का प्रसंग दर्शकों को भावविभोर कर देता है नाटक का अंतीम प्रसंग का यह अंश देखिए —

बायजा : (संभलकर) तुम चलो नरसिंह। आज्ञा-पत्र मेरे पास है।

नरसिंह : नही बायजाबाई। (दृढस्वर) मै यही रहूंगा, तुम जाओ महारानी। तुम जाओ बायजाबाई, आंसुओ में नही, मुस्कान में भीगती हुई।

बायजा : (चलते-चलते) नरसिंह ।

नरसिंह : और मै यही रहूंगा, क्योंकि तुम यहीं हो। महारानी नहीं, बायजाबाई नहीं, लेकिन तुम। (बायजाबाई के जाते हुए कदमों की आवाज).... तुम, मेरी, शारदीया। मेरी शारदीया ... तुम जो मेरी हो, हमेशा थी, हमेशा रहोगी।...[36]

"पहला राजा" नाटक में अभिनय के नये नये प्रयोग दिखाई पडते है। नाटक के प्रारम्भ में वेनके शव का दृश्य और सुनीथा का अट्टहास, शुक्राचार्य द्वारा वेन का शव मंन्थन, शुक्राचार्य गर्ग अत्रि मुनियों द्वारा पृथु को शर्तों में बांध देना पृथु को पहला राजा घोषित करनेपर सूत और मागध द्वारा पृथु की स्तुति करना, कवष को जंघापुत्र ठहराने पर वर्णव्यवस्था के बारे में पृथु और कवष का संघर्ष, भूचण्डी पूजा प्रसंग, भूमी रुपा गौ का दोहन प्रसंग अभिनय के नये उदाहरण है। नहर खोदते समय मजदूरों के अभाव में स्वयं मेहनत करते करेत उर्वी और कवष का पानी में बह जाना अभिनय की

दृष्टि से बडा हृदयद्रावक प्रसंग है। और नाटक के अंतमे पृथु का आत्म निवेदन और उर्वी को सहचरी प्राण, माँ के रूपमे पुकारना सर्वथा अनुपम अभिनय है।

"दशरथनन्दन" नाटक में तुलसिदास का सुत्रधार रूप में प्रवेश और उसी के कारण राम जन्म से लेकर सीता स्वयंवर तक बीच-बीचमें प्रसंगोपात्त कथा प्रसंगो को सूचित करना विशेष उल्लेखनिय है। नाटककारने यहाँ "रामचरितमानस" के रचयिता को ही सूत्रधार के रूप में प्रस्तुत करके अभिनय के एक नये आयाम को दिशा दि है। "दशरथनन्दन" और "रघुकुलरीति" नाटक में लोकनाटय के रूपमें तत्कालीन साधारण जनता का प्रासंगीक अभीनय रामलीला की याद दिलाता है। संक्षेप में जगदीशचन्द्र माथुरजी के आलोच्य नाटकों मतें अभिनय के नये प्रतिमान परिलक्षित होते है।

<u>प्रकाश योजना के अभिनव प्रयोग</u> :

जगदीशचन्द्र माथुरजीने अपने नाटकों में मंचिय निर्देशों में प्रकाश योजना के जो संकेत दिए है वे पात्रों की मनस्थितिको वातावरण निर्मितीको तथा कभी दृश्य परिवर्तन को दिखाने के लिए किए है। "कोणार्क" नाटक में माथुरजी ने प्रकाश योजना के अनुठे प्रयोग सूचित किए है। नाटक के प्रारंभ में "कोणार्क" मंदिर का जो दृश्य और महाशिल्पी विशु का कमरा दिखाया है वहा प्रकाश की योजना तर्क संगली है। विशु चिन्तित मनस्थिति को नाटककारने मंद प्रकाश में दर्शाया है और मदिर के कुछ भागो में दिप प्रकाश का भी प्रयाग किया है। नाटक के तीसरे अंक में कोणार्क मंन्दिर का गभगृह दिखाया है वहा नाटककारने भारतीय परम्परा के अनुसार जलते दिपकों का प्रयोग किया है जिसस मदिर के पवित्र वातावरण का संकेत मिलता है। दुसरी ओर विचार मग्न विशु को भी दिपक के मंद प्रकाश मकं दर्शाया है। प्रस्तुत नाटक में सुत्रधार और वाचिका ओं के माध्यम से जो सूचन वार्तालाप होते है वहाँ भी प्रकाश योजना को स्थान दिया है। नाटक के अंतमें मंदिर के कलश के टुट जानेपर कारूणीक प्रसंग को मंद-करूण संगीत और मंद प्रकाशमें दर्शाया है जो नाटकिय स्थिति मे प्रकाश का योगदान सूचित करता है।

शादीया नाटक के अन्त मे बायजाबाई जब तहखाने मे प्रवेश करती है तब पांचतोले साडी की महत्ता दिखात समय नाटककारने प्रकाश का अभिनव प्रयोग दर्शाया है नाटककारकी प्रकाश योजना अभिनव है- "महीन जाल सी झीनी बारीक साडी को चाँदनी के प्रकाश में फैला देता है। इतनी बारीक है वह साडी कि चाँदनी में घुली-मिली-सी दीख पडती है।"[37] इस नाटक के बायजाबाई और नरसिहराव के कारूणीक प्रसग को प्रथम मंद और अन्त मे प्रखर प्रका...

"पहला राजा" नाटक में प्रकाश योजना का एक नाटक... लिए दो दृश्यों के बीच अंधकार तत्पश्चात प्रकाश का प्रयोग किया है

अन्तराल होता है उसके लिए यह अभिनव प्रकाश याजना है। इस प्रकार की प्रकाश योजना दशरथनन्दन और रघुकुलरीति नाटको में सूचित की है। विशेषतः दशरथनन्दन में जब तुलसीदास सूत्रधार के रूप मे प्रवेश करते है तब उनके लिए विशिष्ट प्रकार की प्रकाश याजना की है इस नाटक में अनेक दृश्य है यह दृश्य तीर्व गति स बदलते रहते है। इनको दर्शानि के लिए भी प्रकाश योजना का प्रयोग किया है।

4) ध्वनि एवं संगीत का औचित्य :

जगदीशचन्द्र माथुरजीने एक ओर ध्वनि तथा दूसरी और सगीत नियोजन को बखूबी विभागा है। दोना ही तत्त्व नाटक की पंक्तियों के साथ घुल-मिलकर संपूर्ण इकाई बन गए है। जैसे सगीत का उन्हे पूर्णज्ञान था। वाद्यसंगीत और गान जिसका प्रभावशाली ढंग स सफल प्रयोग माथुरजीने किया है।

"कोणार्क" नाटक का आरम्भ ही संगीतात्मक शैली में होता है —"कला की जीत। अटल विश्वास जगाए खण्डहर सोता है।"[38] "कोणार्क" के उपक्रम में माथुरजी न इस प्रकार संगीत की व्यवस्था की है – "सम्मिलित वाद्यों का स्वर। उस सगीत की अन्तिम ध्वनियाँ एसी है जस सागर की लहरों को अनवरत न थकनेवाला सृष्टि की व्यंग्यमयी वेदना से परिपूर्ण सदन। इसी प्रकार तृतीय अंक के "उपकथन" में घटना का संगीत के माध्यम से प्रतीकात्मक रूप है। तृतीय अंक के अन्त में विशु की प्रतिशोध भावना के द्वारा इस प्रकार प्रखर हो गई है— "अन्धकार गाढा हो जाता है और सहसा एक विक्षिप्त वाद्य संगीत उमड उठता है, जिसमें मृदंग इत्यादी ताल वाद्य विशेष मुखर है।"[39] उसके बाद संगीत क्रमशः मंद हो जाता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि उन्होने संगीत के माध्यम से संवादो में, भावों में नये प्रयोग करके दर्शकों के हृदय में प्रवेश करने का प्रयत्न किया है।

"शारदीया" में बाद्य संगीत के उपयोग के लिए निर्देश नही है, यद्यपि अन्तिम दृश्य में उस के लिए पर्याप्त स्थान है। जब कि यह धारणा उनकी गलत सिध्द होती है क्योंकि माथुरजी ने द्वितीय अंक तक दृश्य एक में बाद्ययंन्त्र "तंबूरे" का प्रयोग अपने पात्र से करवाया है— "बायजाबाई एक चौकीपर बैठी गाना सुन रही है। गानेवाली एक मुसलमान युवती है जो तंबूरा नीचे रख देती है।"[40] अतः इस प्रकार के नये प्रयोगों से नाटककारकी संगीत एवं ध्वनि के प्रति विशेष जानकारी मिलती है।

"पहला राजा" में बाद्यसंगीत एवं ध्वनियों का संयोजन अधिक मुखर हुआ है। जब शुक्राचार्य सुनीथा से वेन की देह का मंथन करने की आज्ञा मांगते है तो उसके साथ "एक विस्मय संगीत जिसमें यज्ञ-ध्वनि का संकेत है।" उत्पन्न होता है और जब सत्यरूप में देह ... जाता है, देह मंथन शुरू होता है— "डमरू की आवाज कुछ उंची होती है"— इस प्रकार नाटककार जगदीशचंन्द्र माथुरजीने ध्वनि और संगीत के नए प्रयो

"दशरथनन्दन" में "समिधा" के कडकने की ध्वनि, ख[illegible] की मंद होती ध्वनि आदि संगीत के नए प्रयोग स्पष्ट किए है।

माथुरजी ने अपने नाटकों में ध्वनि और संगीत का उपयोग प्रासंगीक वातावरण निर्मिति और पात्रों की मनस्थिति दिखाने के लिए किया है।

निष्कर्ष :

* उपर्युक्त विवेचन से यह कहा जा सकता है कि जगदीशचन्द्र माथुरजी ने आलोच्य नाटकों में रंगमंच के विभिन्न आयामों में नवीनता को स्थान दिया है।

* परम्परागत सूत्रधार और नटी के प्रयोगों में उनकी नवीनता नाटयानुकूल है। जहाँ कोणार्क वृदवार्कि की नीवनता है वहाँ "पहला राजा" में युनानी कोरस की विशिष्ठता है।

* माथुरजी ने "पहला राजा" में आधुनिक अन्योक्ति का जो प्रयोग किया है वह सर्वथा नवीन है। उन्होंने पृथु के रूप में भारत के प्रथम प्रधान मंत्रि पण्डित जवाहरलाल नेहरू के व्यक्तित्व और कार्य को ही चित्रित किया है और स्वतंत्र भारत की सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक, धार्मिक समस्याओं को उदघाटित किया है। इसमें नाटककारका भागा हुआ यथार्थ अनुप्राणित है।

* "कोणार्क" और "पहला राजा" प्रतीग-पात्रों की नियोजना वैशिष्टय पूर्ण है।

* मनोविज्ञान के धरातल पर पात्रों के खण्डित व्यक्तित्त्व का अंकन चरित्र-चित्रण की एक नयी प्रणाली का दयोतक है।

* भाषा और संवाद शिल्प के प्रयोगो में नाटकीय स्थिति को विशेष महत्त्व दिया गया है। पात्रानुकूल, भावानुकूल, प्रसंगानूकूल भाषा और संवाद शिल्प के प्रयोग अनूठे है।

* गीतों और लोकगीतों की प्रासंगीकता बेजोड है। माथुरजी के लोकगीतों में भारतीय लोकजीवन और लोक संस्कृति की अभिव्यक्ति देखने लायक है। "पहला राजा" के लोकगीत बड़े ही सजीव और मार्मिक है।

* रंगमच के नये आयामो मे दृश्यबद अभिनेयता, प्रकाश योजना और ध्वनि और संगीत के प्रयोग औचित्यपूर्ण है ये प्रयोग नाटककारके रंगमचविषयक गहरे ज्ञान और दिर्घ अनुभव की प्रतीति देत है। संक्षेप में उनके आलोच्य नाटक नव्य नाटय शिल्प के उत्कृष्ट उदाहरण है।

सन्दर्भ – सूची :

1. कोणार्क — जगदीशचन्द्र माथुर. पृ.85 संस्क.1973
2. वही, पृ.8
3. पहला राजा–जगदीशचन्द्र माथुर पृ.88 संस्क. 1976
4. नाटय निबन्ध— डॉ. दशरथ ओझा. पृ.67 संस्क. 1972
5. पहला राजा – जगदीशचन्द्र माथुर पृ.117 संस्क.1976
6. दशरथनन्दन — जगदीशचन्द्र माथुर पृ.1 संस्क. 1974
7. वही पृ.3
8. जगदीशचन्द्र माथुर की नाटयसृष्टि–डॉ. नरनारायण राय पृ.112 संस्क.1988
9. रघुकुल रीति – जगदीशचन्द्र माथुर पृ.77,78,79 संस्क.1985
10. पहला राजा– जगदीशचन्द्र माथुर पृ.7 संस्क.1976
11. वही, पृ.6
12. वही, पृ.6
13. हिन्दी विश्व कोश भाग–14 पृ.549
14. हिन्दी के प्रतिक नाटक – डॉ. रमेश गौतम पृ.19 संस्क.190
15. वही, पृ.161
16. पहला राजा – जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 6,7 संस्क. 1976
17. कोणार्क — जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 32 संस्क. 1973
18. आधुनिक हिन्दी नाटक : भाषिक और संवादीय संरचना, गोविन्द चातक पृ. 108 संस्क. 1982
19. शारदीया — जगदीशचन्द्र माथुर पृ.45 संस्क. 1975
20. पहला राजा — जगदीशचन्द्र माथुर पृ.45 संस्क. 1976
21. कोणार्क — जगदीशचन्द्र माथुर पृ.72 संस्क.1973
22. दशरथनन्दन — जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 60 संस्क. 1974
23. रघुकूलरीति– जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 67 संस्क.1985
24. शारदीया – जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 59 संस्क. 1975
25. वही, पृ. 66
26. वही, पृ. 99
27. पहला राजा–जगदीशचन्द्र माथुर पृ.5 संस्क. 1976
28. वही, पृ.36

29. वही, पृ. 85

30. दशरथनन्दन – जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 87 संस्क. 1974

31 रंगमंच और कलादृष्टि –गोविंद चातक पृ.49 द्वि. संस्क. 1988.

32. कोणार्क– जगदीशचन्द्र माथुर— पृ. 23 संस्क 1973

33. दशरथनन्दन – जगदीशचन्द्र माथुर पृ. संस्क.

34. कोणार्क – जगदीशचन्द्र माथुर पृ.34 संस्क. 1973

35. वही. पृ 81

36. शारदीया – जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 114 संस्क. 1975

37. वही. पृ. 113

38. कोणार्क – जगदीशचन्द्र माथुर पृ 20 संस्क. 1973

39. कोणार्क – जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 81 संस्क. 1973

40. शारदीया जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 66 संस्क. 1975

41. पहला राजा— जगदीशचन्द्र माथुर पृ. 42 संस्क. 1976